लेख

रिवाजी व्यवहार

दक्षिण एशिया में महिला हिंसा की रूपरेखा

राधिका कुमारास्वामी

सामिया का खाविंद एक हिंसक आदमी था। एक दिन तंग आकर वह घर से भाग गई। मायके जाकर उसने परिवार को बताया कि वह तलाक चाहती है। घरवालों को शक था कि सामिया के किसी और से नाजायज़ संबंध हैं पर उसकी दृढ़ता देखकर घरवालों ने कहा कि वे उसके साथ हैं। उसकी अम्मी, चचाजान और एक अजनबी वकील के पास मामले पर सलाह लेने आये। अचानक अजनबी ने पिस्तौल निकाली और सामिया को गोली मार दी। फिर उसने पिस्तौल वकील की कनपटी पर रख दी। दफ़्तर के सुरक्षाकर्मियों ने अजनबी को मार गिराया पर सामिया की मां व चाचा दफ़्तर की एक मुलाज़िमा को अगवा करके भाग गये। ख़ैर मुलाज़िमा को तो किसी तरह छुड़ा लिया गया परन्तु पुलिस ने इस मामले में कुछ भी करने से इंकार कर दिया। उनका कहना है कि ये 'कारो-कारी' का मसला है।

औरतों के प्रति हिंसात्मक रिवाजी व्यवहारों पर कानून की विफलता विशेष रूप से दिखाई देती है। औरतों के साथ होने वाले हिंसात्मक रिवाजी व्यवहारों की सबसे बड़ी संख्या दक्षिण एशिया क्षेत्र में पाई जाती है। इन व्यवहारों की अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर आलोचना के प्रति स्थानीय प्रतिक्रिया मिली-जुली है। कुछ का विचार है कि ये एक आंतरिक मामला है और दुनिया को इससे कोई सरोकार नहीं है। कुछ मामलों को वैधता सांस्कृतिक संरचनाओं के नाम पर मिलती है जिनकी आलोचना या उनको खत्म करने की कोशिशों को पश्चिमीकरण और उपनिवेशतावाद की अहंकारी विरासत के तौर पर देखा जाता है। यद्यपि इन समाजों में महिला संगठनों ने इन मुद्दों को उठाया है और इनको दक्षिण एशिया में महिलाओं के निम्न दर्जे के सबूत के रूप में पेश भी किया है। ये रिवाजी व्यवहार उन अंतर्राष्ट्रीय ज़िम्मेदारियों से निरन्तर संघर्षरत रहते हैं जो दक्षिण एशिया के राष्ट्रों ने अपनी मर्ज़ी से उठा रखी हैं। इन पर लगा पश्चिमीकरण का आरोपी दावा भी खोखला साबित होता है क्योंकि इनमें से कई समाज तीव्रता से भौगोलिकरण की ओर बढ़ रहे हैं तथा संस्कृति का सवाल केवल औरतों के निचले दर्जे के लिए महत्वपूर्ण दिखाई पड़ता है। निजी व सार्वजनिक के बीच द्विविधता का दक्षिण एशिया में एक खास अर्थ है- विद्वानों का दावा है कि निजी के मायने 'पूर्वी', 'आध्यात्मिक' व 'औरतों के अधिकार-क्षेत्र' से है। रिवाजी व्यवहारों में परिवर्तन का अर्थ 'निजी' दायरे का बदलाव है और इस लिहाज़ से यह दक्षिण एशियाई समाज के 'पूर्वी व आध्यात्मिक' स्वरूप को चुनौती देता है। इसलिए हिंसक रिवाजी व्यवहारों को मिटाने के प्रयासों को स्थानीय विरोध झेलना पड़ता है।

दक्षिण एशिया का एक रिवाजी व्यवहार जिसे सबसे ज़्यादा अंतर्राष्ट्रीय तवज्ज़ो मिली है वह है 'सम्मान जनित हत्या'। सामिया सरवर मामले ने अंतर्राष्ट्रीय

स्तर पर एक बवाल मचा दिया था। एशिया में सम्मान के नाम पर होने वाली हत्याओं में व्यभिचार की दोषी औरतों की परिवारवाले हत्या कर देते हैं। औरतों का कत्ल, बलात्कार का शिकार होने पर, 'अनुपयुक्त' पुरुष से प्रेम संबंध होने पर भी किया जाता है; यानी कोई भी ऐसा भावनात्मक या यौनिक व्यवहार जो परिवार की पुरुष प्रधान पितृसत्तात्मक सत्ता को भंग करे। सम्मान की रक्षा के लिए, औरतों की हत्या करने का हक़ परिवार के मुखिया के पास होता है, एक मज़बूत जड़ों वाली परम्परा है जिसे परिवार की औरतें भी स्वीकारती हैं। परिणामस्वरूप यह रिवाजी व्यवहार मज़बूती से कायम है और इन मामलों में पुलिस अभियोजन बेहद कमज़ोर होता है।

दक्षिण एशिया से संबंद्ध एक अन्य रिवाजी व्यवहार है 'वधू दहन'। 1990 में 'वधू दहन' अपने चरम पर था, 1983 में 437 मौतें, 1991 में 4856 जो 1993 में बढ़कर 5582 तक पहुंच गई थी। और ये उन मामलों की गणना है जिनकी पुलिस में रिपोर्ट की गई थी। 1980 में दिल्ली शहर में हर बारह घंटे में एक गृहिणी 'दहेज' के कारण अप्राकृतिक मृत्यु का शिकार होती थी।

यद्यपि कुछ समुदायों में दहेज ज़मीन व अचल सम्पत्ति से जुड़ा होने के कारण महिलाओं को सुरक्षा प्रदान कर रहा था, परन्तु आधुनिक समाज में यह एक परम्परागत व्यवहार का विकृत लक्षण बन गया है। आजकल दहेज में सबसे पहले वधू के लिए कपड़े, गहने, घर का सामान दिया जाता है। दूसरे नम्बर पर वर के लिए शौक का सामान जैसे घड़ी, सोने की ज़ंजीर, महंगे कपड़े व तीसरे नम्बर पर वर के नाम अचल सम्पत्ति, टीवी, फ्रिज, विडियो आदि आधुनिक उपकरण शामिल होते हैं। ये सभी सामान व नकदी वर को उपहार स्वरूप दिया जाता है और जो एक पत्नी की मौत होने पर दूसरी शादी में दोबारा मिल जाता है।

'वधू दहन' के कारणों में दहेज, पति-पत्नी के बीच तालमेल की कमी, तलाक़ कानूनों की कट्टरता अथवा बेटे की चाह कुछ भी हो सकते हैं। हाल ही में *भारतीय दंड संहिता* में दहेज हत्या के मामलों से निपटने के लिए संशोधन किए गए हैं। 1986 से पति व परिवारवालों के लिए कम से कम सात वर्ष से लेकर उम्रकैद तक का प्रावधान है अगर औरत की मृत्यु जलने, चोट, दहेज क्रूरता या अन्य अप्राकृतिक कारणों से हो जाती है। इन कानूनों के कार्यान्वयन से दहेज हत्याएं कुछ कम हुई हैं हालांकि दक्षिण एशिया के कुछ क्षेत्रों में ऐसी घटनाएं अभी भी घटती है।

दक्षिण एशिया के कुछ हिस्सों में औरतें 'तेज़ाब हमलों' का शिकार होती हैं। बंगलादेश में 1998 में 200 औरतें इसका शिकार बनीं। 'तेज़ाब हमले' अक्सर औरतों पर परिवार की इज़्ज़त बचाने के लिए परिवारवालों द्वारा या फिर प्रेम प्रस्ताव ठुकराने का बदला चुकाने के लिए बाहर वालों द्वारा किए जाते हैं। बंगलादेश में इन पर काफी ध्यान दिया गया है परन्तु दक्षिण एशिया के अन्य हिस्सों में ये अभी भी जारी हैं। इनका उन्मूलन तब तक मुश्किल है जब तक औरतों के भावनात्मक और यौनिक व्यवहार को उन पुरुषों के सम्मान के साथ जोड़कर देखा जाता रहेगा जो उनके अंतरंग संबंधी हैं।

भारत के कुछ हिस्सों में प्रचलित परम्पराओं में 'सती' एक अन्य प्रथा है जिसे अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर उठाया गया है। अस्सी के दशक में रूपकंवर सती कांड ने राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर काफी बवाल मचाया था। कुछ विद्वानों का मत है कि 'सती' एक पत्नी का अपने पति के लिए शौर्य का प्रतीक है और इस 'गौरव मृत्यु' को नकारा नहीं जाना चाहिए। पर कुमकुम संगारी तथा अन्य अकादमिकों के विचार में 'सती' अक्सर ज़ोर-ज़बरदस्ती के हालातों में की जाती है क्योंकि औरतों के जीवन का कोई मोल नहीं समझा जाता। इसके प्रति उदारता का रवैया होने से काफी परिवार औरतों को इस परम्परा के पालन के लिए बाध्य करेंगे जिससे विधवा होने पर उनकी देखभाल न करनी पड़े। इसी वजह से महिला संगठनों ने 'सती' के व्यवहार और विचारधारा दोनों का विरोध किया है। सौभाग्य से भारत

ने इस पर दृढ़ प्रतिक्रिया दिखाई। संसद ने *सती प्रथा महिमामंडन विरोधी कानून* के तहत इस प्रथा को गैर कानूनी करार दिया। तब से केवल इक्के-दुक्के मामले ही सामने आये हैं जो आपराधिकरण के महत्व की ओर इशारा करते हैं। परन्तु रूपकंवर के परिवार को समुदाय के मुखियाओं ने बाइज़्ज़त बरी कर दिया जो इस सच्चाई का संकेत है कि औरतों के प्रति होने वाली रिवाजी हिंसाओं में समुदाय शायद ही कभी किसी को सज़ा सुनाता हो।

'सती' की परम्परा हमें याद कराती है कि विधवाओं के प्रति हिंसा और भेदभाव दक्षिण एशिया का एक रिवाज है। 'सती' के अलावा 'डायन प्रथा' भी इसी कड़ी का हिस्सा है। बिहार में हर साल दो सौ औरतों को डायन करार देकर जायदाद संबंधी संघर्षों के कारण ससुराल में मार दिया जाता है। आर्थिक स्वायत्तता व सुरक्षा का अभाव इन विधवाओं के हालात काफी मजबूर बना देता है। मनहूस कहलाई जाने वाली, सामाजिक बहिष्कार और भेदभाव की गिरफ़्त में ये औरतों हिंसा सहने को बाध्य होती हैं अगर उसकी मौजूदगी परिवार के संसाधनों को शक्तिहीन बनाने लगे। कुछ मामलों में सांस्कृतिक आड़ में अनचाही औरतों को परिवार से अलग रखकर भी मरने को मजबूर कर दिया जाता है। अपराधी न्याय प्रणाली इन मज़लूम विधवाओं की मौत के लिए ज़िम्मेदार परिवारों को कोई सज़ा नहीं देती।

दक्षिण एशिया का एक अन्य रिवाजी व्यवहार जो महिला अधिकारों का हनन करता है वह है 'विवाह'। कुछ दक्षिण एशियाई समुदायों में पुरुष से यह अपेक्षित है कि वह अपनी पंसद की लड़की का पीछा करे, उसका बलात्कार करे और फिर उससे विवाह करे। श्रीलंका के *वेद्दा समुदाय* और भारतीय *भीलों* में ये परम्परा मौजूद है। श्रीलंका के अटॉर्नी जनरल ने यह विज्ञप्ति जारी की, कि वे किसी भी युवा *वेद्दा* पुरुष के ऊपर बलात्कार का आरोपी होने पर भी कार्यवाई नहीं करेंगे चाहे शिकायत लड़की ने ही क्यों न की हो। बलात्कार के माध्यम से शादी उस विचारधारा का हिस्सा है जिसके अनुसार औरत के साथ पहली बार यौन संबंध बनाने वाले व्यक्ति के ऊपर उससे शादी करने की ज़िम्मेदारी होती है। यह मुख्यधारा समाज का वह रिवाज है जिसमें लड़के के ऊपर उस लड़की से शादी करने का दबाव डाला जाता है। अंतर्राष्ट्रीय मानक और राष्ट्रीय संविधान की मांग है कि औरत के आत्म-सम्मान और अधिकारों का हनन करने वाले इन रिवाजी व्यवहारों पर अंकुश लगाया जाये और सामान्य आपराधिक प्रक्रिया इन मामलों में लागू की जाये।

दक्षिण एशिया की एक अन्य हिंसक परम्परा 'बाल विवाह' है। नेपाल में 40 प्रतिशत विवाहों में लड़कियों की उम्र चौदह वर्ष से कम होती है। पाकिस्तान का 'वत्ता-सत्ता' निकाह एक अन्य परम्परा है जो औरतों के प्रति हिंसात्मक है। इसमें औरत पुरुषों के बीच में अदला-बदली की वस्तु बन जाती है। दो औरतों का विवाह दो पुरुषों से अदला-बदली रिवाज के तहत किया जाता है। बारह वर्ष की रेशमा का 'वत्ता-सत्ता' विवाह दो परिवारों के झगड़े के फैसले के तौर पर हुआ था। विवाह की पहली रात को पति ने व्यभिचार का आरोप लगाकर उसे गोली मार दी। ये पारम्परिक विवाह 'मान' का प्रतीक होते हैं और समुदाय औरतों का दमन करता रहता है। दक्षिण एशिया में इसकी जड़ें इतनी गहरी हैं कि एकजुट प्रयासों के बगैर इनमें परिवर्तन लाना नामुमकिन है।

औरतों के प्रति रिवाजी हिंसात्मक व्यवहारों की नींव का संबंध 'बेटे की चाह' से जुड़ा है। अमर्त्य सेन ने तैथिक क्रम के ज़रिए यह दर्शाया है कि बालिका शिशु के साथ भोजन, शिक्षा व स्वास्थ्य के स्तर पर अत्याधिक भेदभाव किया जाता है। बीमार होने पर बेटों को अस्पताल ले जाया जाता है, बच्चियां लड़कों से अधिक कुपोषित हैं और केवल 15 प्रतिशत लड़कियां ग्रामीण प्राथमिक स्कूलों में पांचवी से आगे पढ़ती हैं। स्कूल दाखिले के मामले में लैंगिक अंतर भारत में 14 प्रतिशत, नेपाल में 19 प्रतिशत व पाकिस्तान में 24 प्रतिशत है। बेटों की चाह व बेटियों के प्रति भेदभाव आजीवन चलता रहता है और औरतों का जीवन हिंसा और भेदभाव के जीवन चक्र में पिसता जाता है।

ऊपर रेखांकित किये गये रिवाजी व्यवहारों की मांग है कि राज्य एक मानकीय ढांचा स्थापित करे जो इन व्यवहारों की निंदा करते हुए इनका कार्यान्वयन करने वाले पक्षों के विरुद्ध आपराधिक कार्यवाई करे। पर अधिकांश समय राजनैतिक अलोकप्रियता के डर से राज्य महिलाओं की हिंसा से सुरक्षा के लिए ज़रूरी अंतर्राष्ट्रीय मानकों पर ज़ोर देने से कतराते हैं। नतीजतन, हिंसा एक 'सामान्य' 'रोज़मर्रा का आम हिस्सा' बन जाती है और सब ओर एक मूक स्वीकृति घर कर लेती है कि हिंसा करने वालों के ख़िलाफ़ सख्त कार्यवाई नहीं की जानी चाहिए। हिंसा का यही 'प्रसामान्यीकरण' महिला हिंसा व विचारधारा का आपसी संबंध दिखाता है। हाल ही में बंगलादेश में किए गये एक सर्वेक्षण में अधिकतर मर्दों का दावा था कि एक 'दोषनिवारक' सज़ा के तौर पर पत्नियों के ख़िलाफ़ हिंसा सही कदम है। महिलाओं के प्रति हिंसा का 'प्रसामान्यीकरण' दक्षिण एशिया का एक अंधकारमय पक्ष है। यही प्रसामान्यीकरण पुरुषों को हिंसा को गलत समझने, औरतों को हिंसा का विरोध करने और आपराधिक न्याय प्रणाली को इंसाफ़ करने में अशक्त बना देता है।

एक दूसरा कारण जिसका दक्षिण एशियाई समाज में हिंसा के स्तर से सीधा संबंध दिखाई पड़ता है वह है औरतों में आर्थिक आत्म-निर्भरता और सशक्तता का अभाव। इसी आर्थिक सुरक्षा की कमी के चलते वे चुप रहकर हिंसा सहती रहती हैं। उत्तराधिकार कानून व व्यवहार, ज़मीन की मिल्कियत का अभाव, शिक्षा व गतिशीलता की कमी उन्हें ऐसे हालातों में कैद रखती है जिनसे बाहर निकलना मुश्किल लगता है। डेविड लेविनसन ने अस्सी देशों के अध्ययन से पाया कि औरतों के ख़िलाफ़ हिंसा के प्रमुख कारणों में आर्थिक आत्म-निर्भरता का अभाव सबसे अहम था।

दक्षिण एशिया समाज में मर्दानगी के मानक भी महिला हिंसा का वाजिब कारण है। कुछ खास समुदायों में हिंसा का संबंध 'मान-सम्मान' और 'मर्दानगी' की अभिव्यक्ति से है। पितृसत्तात्मक नियमों और अपेक्षाओं को चुनौती देने वाली औरतों को हिंसा का सामना करना पड़ता है। अगर हिंसा का सीधा अर्थ 'मर्द की तरह' बनने से है तो हिंसा का 'प्रसामान्यीकरण' होता है और ये सामाजिक रिवाजों और व्यवहारों का अहम हिस्सा बन जाती है। जब मर्द बनने का अर्थ होता है अपनी पत्नी को नियंत्रण में रखने और पालतू बनाने की क्षमता तब व्यवहार भी उसी लक्ष्य के अनुसार तय किया जाता है। गहरे पैठे ये मूल्य और मर्दाने रिवाजों में परिवर्तन लाने के लिए कई पीढ़ियों तक प्रयास जारी रखने होंगे जिससे ये मानक और अपेक्षाएं बदल सकें। इसके लिए नौजवानों के लिए दूसरे अहिंसक मर्दाने रिवाजों को प्रोत्साहन देना होगा। आधुनिक समय में कुछ इस तरह की परम्पराएं व व्यवहार दक्षिण एशिया में उभरे हैं परन्तु इन्हें स्थाई बनने में अभी काफी वक्त लगेगा।

मर्दानगी के मानकों के साथ ही औरतों के सही भावनात्मक और यौनिक बर्ताव का सवाल जुड़ा है। हिंसा का एक बड़ा रूप स्त्री यौनिकता से संबंद्ध है। बलात्कार में यौन हिंसा, औरतों के व्यापार में यौन कर्म, यौन उत्पीड़न व कार्यस्थल पर भेदभाव, घरेलू हिंसा में पति के साथ यौन संबंध बनाने से इन्कार, के साथ-साथ सम्मान जनित हत्या, स्त्री जननांग विकृतिकरण जैसे रिवाजी व्यवहारों का स्त्री यौनिकता नियंत्रण से संबंध है। इसी कारण कुछ लोगों का मानना है कि महिलाओं को हिंसा से सुरक्षा के साथ-साथ प्रजनन अधिकारों की स्वीकृति व अन्य स्वायत्ताओं पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए। यह अंतर्संबंध औरतों की हिंसा के डर से मुक्ति के हालात स्थापित करने के लिए महत्वपूर्ण है।

महिलाओं के ख़िलाफ़ हिंसा 'एचआईवी/एड्स' के सार्वभौमिक पहलू से भी जुड़ी है। 4.2 करोड़ एशियाई जनसंख्या एचआईवी ग्रस्त है, इसमें भारत दूसरे नम्बर पर है। यूएनएड्स के आंकड़ों के अनुसार भारत में 3.86 करोड़, पाकिस्तान में 74000, श्रीलंका में 7500, नेपाल में 34000 व बंगलादेश में 13000 एचआईवी संक्रमित लोग हैं।

इस क्षेत्र में औरतों को एचआईवी संक्रमण होने के कई कारण हैं। व्यापक गरीबी के कारण युवा लड़के व लड़कियां यौन कर्म से जुड़े हैं; यौन बाज़ारों में ग्राहक कंडोम इस्तेमाल करने से इंकार करते हैं। बाल श्रमिक लड़कियां भी अक्सर शोषण व यौन उत्पीड़न का शिकार होती हैं। विकास की कमी से नौजवान शहरों में पलायन करके झुग्गी-बस्तियों में अपने परिवारों के बगैर रहने लगते हैं। अकेलेपन के कारण असुरक्षित यौन संबंध इस बीमारी से संक्रमण का खतरा बढ़ा देता है। उपयुक्त स्वास्थ्य सुविधाओं की कमी के कारण लोग सही समय पर यौन संक्रमण व एचआईवी

परीक्षण करवाकर इलाज नहीं कर पाते। काफी बड़ी संख्या में लोगों को एचआईवी से जुड़े खतरों की जानकारी नहीं है। संक्रमित पुरुषों की पत्नियां और साथी असुरक्षित यौन के लिए मना नहीं कर पातीं और नतीजतन संक्रमित हो जाती हैं। यौन शिक्षा व यौनिकता और यौन बीमारियों पर एक खुले माहौल में बातचीत के अभाव के कारण असुरक्षित यौन युवाओं की जीवनशैली का हिस्सा बना रहता है। शहरी क्षेत्रों में नशीली दवाओं के सेवन के लिए संक्रमित सुइयों का उपयोग भी एचआईवी संक्रमण के विस्तार का अहम् कारण है।

एचआईवी संक्रमित होने के बाद औरतों को भेदभाव और हिंसा का सामना करना पड़ता है। सार्वजनिक स्थलों, कार्यस्थल आदि पर भेदभाव अधिकतर अनभिज्ञता के कारण होता है। एचआईवी पॉज़िटिव महिलाओं तथा उनसे बच्चों तक पहुंचने वाले संक्रमण पर भी बहुत सीमित जानकारी उपलब्ध है। हालांकि सर्वोच्च न्यायालय ने एचआईवी संक्रिमत लोगों के हक़ों की सुरक्षा व भेदभाव रोकने के लिए कुछ निर्णय पारित किए हैं फिर भी दक्षिण एशियाई स्तर पर काफी कम कानूनी प्रावधान मौजूद हैं। कुछ देशों की सरकारों ने एड्स से निपटने के लिए राष्ट्रीय नीतियां भी विकसित की हैं- जैसे भारत की *राष्ट्रीय एड्स रोकथाम व नियंत्रण नीति*। परन्तु दक्षिण एशिया के अन्य देशों में एड्स की रोकथाम के लिए कोई खास कानून या समग्र कार्यक्रम तैयार नहीं किए गए हैं।

विश्व स्वास्थ्य संगठन ने अपने एक अध्ययन में औरतों पर होने वाली हिंसा से समाज को पहुंचने वाले नुकसान व कीमत की एक रूपरेखा तैयार की है। इसमें अस्पताल, इलाज व पुनर्वास का खर्चा शामिल है। इसके अलावा बच्चों पर होने वाले दीर्घकालीन प्रभावों पर किए गए शोध अध्ययन से पता चला है कि हिंसा के साक्षी बच्चे अपने जीवनकाल में हिंसा का रास्ता अपनाते हैं। अक्सर औरतों के लिए हिंसा की सबसे बड़ी कीमत है 'खौफ़' या 'हिंसा का डर'। औरतें हिंसा के डर से घर के भीतर रहती हैं और समाज व सार्वजनिक विकास लक्ष्यों में अपना पूरा योगदान नहीं दे पातीं। हिंसा के इस उदासीन कारण का मनोवैज्ञानिक स्तर पर यह प्रभाव पड़ता है कि औरतों को दूसरे दर्जे का नागरिक समझा जाता है जो अशक्त हैं और जिन्हें सदैव सुरक्षा की ज़रूरत पड़ती है।

राधिका कुमारास्वामी *मानव अधिकार अधिवक्ता हैं।*
वे संयुक्त राष्ट्र संगठनों में विभिन्न पदों पर काम कर चुकी हैं।